द्वितीय अध्याय

निराला का काव्य और जन

सामान्य जन से जुड़ी रचना सामान्य जनमानस के मनोभावों की अभिव्यक्ति करने में सक्षम होती है। सामान्य जन-जीवन से रस ग्रहण करके ही सर्जना को प्राणवान बनाया जा सकता है और ऐसी ही रचना को जनवादी रचना की संज्ञा दी सकती है। "जनवादी कविता जनता की जिन्दगी के बीच से उगते हुए उसकी आशाओं, आकांक्षाओं उसके स्वप्नों तथा संघर्षों को वाणी देती है।"1 अर्थात जनवादी काव्य में कवि जनसामान्य के सुख-दुख, पीड़ा यातना, वेदना, कुण्ठा, असंतोष, असहायता, निर्बलता, शोषण, विवशता, उपेक्षा तथा उसके संघर्ष का यथार्थ और सजीव चित्रण करता है। स्पष्ट है कि जनवादी कविता का आधार सामान्य जनता है। सामान्य जनता से हमारा तात्पर्य समाज के उन वर्गों से है जो सदियों से शोषित, दलित, पद-दलित, उपेक्षित और पीड़ित है जिनमें भिक्षुक, मजदूर, श्रमशील किसान, भूमिहीन, उपेक्षित नारी, विधवा आदि निम्न वर्ग की जनता आती है। "जनवादी कविता का आधार किसी राष्ट्र या देश की जनता का मुख्य जीवन प्रवाह होता है और इस जनता के अन्तर्गत किसी राष्ट्र या देश के निवासियों का मुख्यांश आता है जो समाज के प्रभु वर्गों के विपरीत अपने श्रम के आधार पर जीविका निर्वाह करता है। यह श्रम शारीरिक भी होता है और मानसिक और यही कारण है उत्पादन के साधनों पर एकाधिकार कायम कर दूसरों के श्रम को खरीदने वालों और उनका शोषण कर मुनाफा कमाने वालों के अलावा, तथा सत्ता और व्यवस्था के शीर्ष पर बैठे प्रभुओं और उनके नियामकों के अलावा किसी राष्ट्र या देश के निवासियों का अधिकांश हिस्सा जनता का निर्माण करता है। जनवादी कविता इस जनता की जिन्दगी को उसकी सम्पूर्ण प्रतिनिधिकता तथा समग्रता से प्रस्तुत करती है और अपने इसी व्यापक तथा पुष्टजनाधार के कारण किसी भी समय तथा किसी भी युग में शासक-शोषक वर्गों के समक्ष चुनौति के रुप में प्रस्तुत होती है।" 2

कहा जा सकता है कि समाज के अभिजात वर्ग द्वारा पीड़ित, शोषित, उपेक्षित, दलित आदि जनों की संवेदना को काव्य के माध्यम से कवि जिस सहानुभूति के साथ शब्द-बद्ध करता है वही जनवादी कविता कही जाती है। अनेक विद्वान मानते हैं कि प्रगतिवादी काव्य ही जनवादी काव्य है। जो साम्यवादी विचारधारा से प्रभावित है। यह सच है कि प्रगतिवाद मार्क्सवादी सिद्धांत पर अधारित है लेकिन यह भी सच है कि "प्रगतिवाद साहित्य संघ की स्थापना सन् 1936 में हुइ थी, जब कि जनवादी रचनाएँ छायावाद के बीच सन् 1930 से ही पहले सन् 1920-21 में निराला जैसे कवियों में सामाजिक यथार्थ से पूर्ण विचारधारा मिलने लगी थी।"3

प्रगतिवादी साहित्य से पूर्व जो साहित्य जन-जन से सम्बन्धित रहा वह जनवादी साहित्य है, निराला के अलावा भी ऐसे अनेक रचनाकार है जो जनवादी विचारधारा से प्रभावित रहे और जनवादी काव्य की रचना की। लेकिन निराला के काव्य में जनवादी चेतना जितनी यथार्थ के साथ चित्रित होती हुई प्रतीत होती है उतनी उनके समकालीन और पूर्ववर्ती कवियों में देखने को नहीं मिलती। दलित, उपेक्षित जनों का जितनी सजीवता के साथ निराला ने उपने काव्य में चित्रण किया है, वैसा हिन्दी साहित्य में अन्यत्र दुर्लभ है। भिक्षुक को नायक के रुप में निराला ने पहली बार हिन्दी साहित्य में प्रस्तुत किया है -

" वह आता
दो टूक कलेजे के करता पछताता
पथ पर आता।
पेट-पीठ दोनों मिलकर हैं एक
चल रहा लकुटिया टेक
मुठ्ठी भर दाने को - भूख मिटाने को
मुह फटी पुरानी झोली को फैलाता-"4

भिक्षुक की जिस दयनीय स्थिति का वर्णन कवि ने किया है उससे रोंगटे खड़े हो

जाते हैं और एक सजीव चित्र हमारे सामने उभर आता है। भिक्षुक की आशा बस इतनी ही है कि उसे भूख मिटाने के लिए थोड़ा सा अन्न मिले, लेकिन उसे इतना भी मयस्सर नहीं होता। कवि ने यहाँ सामाजिक विषमता को इन पंक्तियों के माध्यम से व्यक्त किया हैं -

"चाट रहे जूठी पत्तल वे सभी सड़क पर खड़े हुए,
और झपट लेने को उनसे कुत्ते भी हैं अड़े हुए।"5

सामाजिक विषमता कवि को इतना व्यथित करती है कि वे भिक्षुक को कुत्तों से भी गया गुजरा कहने के लिए विवश हो जाते हैं।

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला की कविताएँ समाज से सम्बन्धित एक जागरुक कवि की कविताएँ है, जिसमें समाज के सभी रंग घुले-मिले हैं। इन्होंने आम आदमी के सुख-दुख को, उसके जीवन के विविध पहलुओं को अपने काव्य में व्यक्त किया है। निराला के काव्य में जो लोक चेतना का भाव है वह उनके काव्य को ऊर्जा प्रदान करने सक्षम हुआ है। निराला वर्ण व्यवस्था आधारित विसंगतिओं को दूर करने के प्रबल पक्षपाती थे। इसलिए वे सामाजिक विसंगतिओं को भुलाकर लोगों से उन्नति का मार्ग प्रशस्त करने का आग्रह करते हैं। निराला की लोक कल्याणकारी भावनाएँ उनका जीवन आदर्श थी जो विश्वबन्धुत्व, सामाजिक समानता और देशप्रेम से प्रेरित है। निराला ने सामाजिक विसंगतिओं तथा समस्याओं को निकट से देखा और इन सभी परिस्थितियों के प्रति सचेत रहकर जन विरोधी क्रूर नीतियों पर सीधा प्रहार किया।

स्वांमी विवेकानन्द ने कहा था- "यदि तुम चाहते हो कि कुछ भला हो, तो अपने बाह्य अनुष्ठानों को तिलांजलि दे दो और पूजा करो जीवंत ईश्वर की, मानव देव की प्रत्येक जीव की, जो मानव रुप लिए हुए हैं। भगवान के समिष्टि रुप की और साथ ही उसके व्यष्टि रुप की भी। मुझे अपने मानव बन्धुओं की सहायता करने दो में बस यही चाहता हूँ।"6 इसी विचार का प्रभाव निराला के काव्य में स्पष्ट रुप में दृष्टव्य होता है। निराला में जनसामान्य

के प्रति जो सहानुभूति है, जो संवेदना है वह उनके काव्य में स्पष्ट परिलक्षित होता है। कवि का मानव प्रेमी व्यक्तित्व जनसामान्य की वेदना से व्यथित होकर उसके दुख को दूर करने के लिए स्वयं आतुर हो उठता है। इस प्रसंग में सुषमा पाल का विचार उल्लेखनीय है, "निराला में जन-जन के प्रति सहानुभूति का भाव है। यहाँ तक कि पीड़ित जन की निराशा और संवेदना से स्वयं भी व्यथित होकर कवि का मानव प्रेमी-व्यक्तित्व कुछ करने के लिए आतुर हो उठता है। निराला ने अपने जीवन में दीन-जन की पीड़ा का निवारण, सामर्थ्य की सीमाओं का अतिक्रमण करके भी किया है, जिसका प्रत्येक दृष्टांत स्वयं में अनुपमेय है। काव्य जगत में भी उन्होंने पीड़ित एवं असहाय मानव की करुणा का अत्यन्त मार्मिक ढ़ंग से विवेचन किया है।"7 करुण भावनाओं से युक्त कविताओं में निराला ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि कैसे सामाजिक विषमता ने मानव को पशु से भी गया-बीता बना दिया है, इन कविताओं में 'परिमल' की 'भिक्षुक' और 'विधवा' कविता उल्लेखनीय है। समाज के उपेक्षित अंग के रुप में 'विधवा' किस तरह अनेक कष्टों को सहती, वैधव्य के नियमों का पालन करती हुई साधना और तपस्या का जीवन व्यतीत करती है। विधवा की करुणा और पीड़ामय जीवन का मार्मिक चित्रण निराला ने किया है। दृष्टव्य है-

"वह इष्टदेव के मन्दिर की पूजा-सी
वह दीप-शिखा-सी शान्त, भावों में लीन,
वह क्रूर काल-ताण्डव की स्मृति रेखा-सी
वह टूटे तरु की छुटी लता-सी
दलित भारत की ही विधवा है।" 8

यहाँ कवि ने दैव और समाज के द्वारा शोषित, दमित उस विधवा का चित्र का प्रस्तुत किया है जो इतने अत्याचारों को सहती हुई जीवन निर्वाह करने पर विवश है साथ ही कवि ने समाज के अनीतिपूर्ण व्यवहार पर भी करारा व्यंग्य किया है-

"यह दुख वह जिसका नही कुछ छोर है

दैव अत्याचार कैसा घोर और कठोर है,
क्या कभी पोंछे किसी ने अश्रु जल
या किया करते रहे सबको विकल
ओस कण सा पल्लवों से झर गया
जो अश्रु भारत का उसी से सर गया ।"9

दलितों, पीड़ितो, शोषितों के साथ ही कृषको के प्रति उनकी जो संवेदना का भाव है वह जनवादी विचारधारा से ही प्रभावित है, जो उनकी कविताओं में स्पष्ट परिलक्षित होता है। जिस साहित्य में मानव जीवन का वास्तविक चित्रण प्रस्तुत होता है वही साहित्य शाश्वत भी होता है। निराला के साहित्य का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि उनका साहित्य इसी भावभूमि पर आधारित है। वे पीड़ित और शोषित मानव के प्रबल पक्षधर थे। उन्होंने अपने सिद्धांतों को व्यवहारिक रुप भी प्रदान किया। दलित जन की महानता और विराटता को उन्होंने सदैव उजागर करने का प्रयत्न किया। निराला ने जाति धर्म को महत्व नही दिया संत रैदास को श्रद्धांजलि देना इसी बात का प्रमाण है-

"छुआ पारस भी नही तुमने रहे
कर्म के अभ्यास में, अविरत बहे
ज्ञान-गंगा में, समुज्जवल चर्मकार,
चरण छु मैं कर रहा नमस्कार।" 10

इस दृष्टि से विचार करने पर यह स्पष्ट होता है निराला के पूर्व तथा उनके समकालीन कवियों में जो जनवादी दृष्टकोण है वह निराला से सर्वथा भिन्न है।

जन सामान्य वेदना के आलम्बन विभाव के रुप में।

विभावादि (विभाव, अनुभाव, संचारी भाव) का जे संयोग स्थायी भाव के साथ होता है,

उससे रस की निस्पत्ति होती है। विभाव स्थायी भावरुप चित्तवृत्ति के उत्पत्ति के कारण होते हैं। विभावों(अर्थात् ललना आलंबन विभाव) और उद्यान(उद्दीपन विभाव) आदि से रति आदि स्थायी भाव उत्पन्न होकर रस रुप में परिणत होता है।

निराला ने परिश्रमशील जनता की दुर्दशा, उनके अभाव और व्यथित जीवन की दैन्य स्थिति को देखा और उसके भीतर समाहित उस शक्ति की तलाश की जो उन्हें ऐसे में भी जीने की प्रेरणा देती है। स्वयं निराला ने इन समग्र यातनाओं की असहनीय पीड़ा का अनुभव किया और उसकी अभिव्यक्ति भी की-

"मैंने देखा बड़ा मैला
मन उस समाज का
चोट खाई हुई राम जी के राज से
शूद्रों को मिला नहीं
जिनसे कुछ भी कहीं
ढ़ाढ़स बधाया मैंने
मीठे-मीठे शब्द कहकर।"11

निराला जी ने स्वस्थ समाज के निर्माण को महत्व दिया जिसमें अमीर-गरीब, उँच-नीच, राजा-प्रजा सभी सुख-सुविधापूर्ण जीवन-यापन कर सके इसके लिए इन्होंने व्यक्ति-व्यक्ति की असमानता को मिटाकर समानता लाने का प्रयास किया-

"मानव-मानव से नहीं भिन्न
निश्चय हो श्वेत कृष्ण अथवा
वह नहीं क्लिन्न
भेद कर पंक
निकलता कमल जो मानवता का
वह निष्कलंक
हो कोई सर।"12

सामाजिक सत्य की प्राप्ति के लिए निराला अपने स्तर पर जूझते रहे, लोकमानस को जागृत करने की प्रवृति इनके काव्य की विशेषता है। मानव का मानव के लिए सद्भाव लोक-जीवन के उत्थान का सार्थक प्रयास निराला ने अपने काव्य के माध्यम से किया है। इनके काव्य में जन-जीवन का यथार्थ एवं सजीव चित्र उजागर हुआ।

निराला का काव्य जीवन्त अनुभवों का प्रमाणिक दस्तावेज है इसमें जन - जीवन की अभिव्यक्ति देखते ही बनती है जिसमें भी लोक चेतना का पक्ष मुख्य रुप से मुखरित हुआ है। निराला ने किसान मात्र के चित्र ही अंकित नही किए हैं, बल्कि उसके परिवेश की सच्चाई को यथार्थ रुप में चित्रित किया है। निराला के काव्य में ग्रामीण जीवन के संस्कार स्वतः ही जीवन्त हो उठे हैं, क्योंकि उनकी कविता का गाँव बैसवाड़े की कविता का गाँव है। जिसमें जीवन की कर्मभूमि का वर्णन इस रुप में किया गया है, कि जो अपनी व्यापकता के कारण किसी क्षेत्र विशेष का गाँव नही रह जाता बल्कि देश के किसी भी क्षेत्र का गाँव बन जाता है । इन्होंने जन-जीवन के अनुभव जगत और जन मानसिकता को, लोक संस्कारों से पुष्ट कर सृजनात्मकता के बल पर काव्य में जन--जीवन की यथार्थता के साथ व्यक्त किया है। निराला के काव्य में ग्रामीण मिट्टी की महक, पनघट पर युवतियों की भीड़, सीधे सादे नौजवानों की सरलता एवं सौम्यता जंघियाँ, लोटा इत्यादि का प्रयोग करना आंचलिक परिवेश का ही परिचायक है। इनके काव्य में ग्रामीण जीवन की सहजता, जीवनानुभूति एवं संवेदना को चित्रित किया गया है। ग्रामीण जीवन की जैसी सहज, सरल, सरस और सजीव संवेदनात्मक तथा सुक्ष्म और यथार्थ वर्णन 'नये पत्ते' में प्रस्तुत किए गये हैं वैसे हिन्दी के किसी अन्य काव्यकृति में देखने को नही मिलते। निराला ने प्रत्येक अनुकूल और प्रतिकूल स्थिति को अपने काव्य का विषय बनाया । किसान प्रकृति के बदलते स्वरुप से कई बार परेशान रहता है और निराला ने उसकी परेशानी का सजीव चित्रण अपने काव्य में सफलता के साथ किया है -

"एक हफ्ते पहले पाला पड़ा था,
अरहर कुल की कुल मर चुकी है

हवा हाढ़ तक बेंध जाती है,
गेहूँ के पेड़ ऐठें खड़े हैं
खेतिहरों में जान नहीं है
मन मारे दरवाजे कौड़े ताप रहे हैं
एक दूसरे से गिरे गल बात करते हुए
कुहरा छाया है।"13

एक ओर खेतिहरों की दयनीय स्थिति है, दैवी प्रकोप से उनकी फसल बरबाद हो चुकी है, तो दूसरी तरफ जमींदार के सिपाही हैं जो लट्ठ लिए उनपर दया करने के बजाय डाँटते हुए चँदा वसुल करने पर उतारु हैं -

"डेरे पर थानेदार आये हैं
डिप्टी साहब ने चंदा लगाया है,
एक हप्ते के अन्दर देना है।
चलो बात दे आओ।"14

यहाँ खेतिहर तो सिपाही का विरोध नही कर पाते लेकिन उनकी आन्तरिक चेतना उसका विरोध करना चाहती है, जिसे कवि ने कुत्ते के माध्यम से सांकेतिक अभिव्यक्ति कुछ इस प्रकार की है -

"लोगों के साथ कुत्ता खेतिहर का बैठा था,
चलते सिपाही को देखकर खड़ा हुआ,
और भौकने लगा,
करुणा से बन्धु खेतिहर को देख-देख कर।"15

स्पष्ट है कि यह करुणा निराला की ही है गरीब खेतिहरों के प्रति। डिप्टी साहब तो चंदा लगाने से नहीं चुकते। इस स्थिति पर कुत्ते का भौकना व्यंग को और तीव्र करता है। इसी तरह 'छलांग मारता गया' कविता में मेंढ़क को केन्द्र बनाकर किसानों की असहायता और जमींदारों के अत्याचार को कवि ने अभिव्यंजना प्रदान की है -

" जमींदार के सिपाही की
लाठी का गूला, लोहा बँधा,
दरवाजे गढ़ाकर जाता है।
लोगों के सर
जैसे ढ़ाल देखती आँखों के नीचे गड़े हों।" 16

निराला की कविताओं में जनता के विविध शोषकों के चेहरों और उनके द्वारा शोषित जनता का खुलकर स्पष्ट किया है। इन शोषकों में व्यापारी, बनिया और वैश्य आदि प्रमुख है -

"बालों के नीचे पड़ी जनता बल तोड़ हुई।
माल के दलाल ये वैश्य हुए देश के ।
सागर भरा हुआ,
लहरों के बहले रहे,
बनिज की राह खोई।
किरणे समन्दर पर कैसी पड़ती दिखी,
लहरों के झूले-झूले,
कितना विहार किया कानूनी पानी पर।"17

निराला के काव्य में जन सामान्य की वेदना आलम्बन विभाव के रुप में अभिव्यक्त होती हुई दिखाई देती है। इनके मन में समाज के दलितों, शोषितों, पीड़ितों के प्रति अपार

सहानुभूति प्रतीत होती है। 'दीन' कविता में इसकी अभिव्यक्ति सहज ही देखी जा सकती है। वेदना की की निरंकुश क्रीड़ा से पीड़ित व्यक्ति की कारुणिक दृश्य का सजीव वर्णन कुछ इस तरह कवि करता है -

"उत्पीड़न का राज दुख ही दुख
यहाँ है सदा उठाना
क्रुर यहाँ पर कहलाते हैं शूर
और ह्रदय का शूर सदा ही दुर्बल क्रूर
स्वार्थ सदा रहता है परार्थ से दूर।"18

निराला ने समाज में रह रहे उस मानव को देखा जो पर्याप्त परिश्रम करने के बाद भी अपने श्रम का फल नहीं पाते बल्कि उस फल का भोक्ता कोई और होता है। निराला भिक्षुक की मार्मिक वेदना से व्यथित होकर उसकी दयनीय स्थिति का वर्णन कुछ इस प्रकार करते हैं -

"वह आता
दो टूक कलेजे के करता पछताता
पथ पर आता।
पेट-पीठ दोनों मिलकर हैं एक
चल रहा लकुटिया टेक।" 19

यहाँ उनका उद्देश्य केवल भिक्षुक की दयनीय स्थिति का वर्णन करना ही नही है अपितु लोक-जीवन के प्रति दृढ़ आस्था सामाजिक यथार्थवादी दृष्टि और संवेदनशीलता को उजागर करना है। आँसुओं के घुट पीकर रह जाने वाला लाचार भिक्षुक सड़क पर पड़े पत्तलों के लिए कुत्तों से प्रतिस्पर्धा कर रहा है, इस तरह कुत्तों से भी बदत्तर होती मानवीय

स्थिति को चित्रित करना और उसकी स्थिति में सुधार लाना कवि का उद्देश्य है। इनके काव्य में लोक-वेदना विभिन्न रुपों में अभिव्यक्त हुई है। इनकी पीड़ा की अभिव्यक्ति निर्धन नर-नारी के लिए समान रुप से व्यक्त हुई है इन्होंने केश, अधर और पेट को परंपरागत रोमांस और सौंदर्य के लिए वर्णित न करके बल्कि उसके माध्यम से मानव की विपन्नावस्था और कारुणिक दशा का जीवन्त तथा घृणित सत्य को स्थापित किया है-

"वेश रुखे, अधर सुखे
पेट भुखे आज आये
हीन जीवन, दीन चितवन
क्षीण आलंबन बनाये।"20

मानव समाज की इन विडम्बनाओं को परखकर निराला का निश्छल मन करुणा-विगलित हो जाता है। 'तोड़ती पत्थर' नामक कविता में अभिजात्य वर्ग के अहं की प्रतिमूर्ति अट्टालिकाओं के सम्मुख इलाहाबाद के पथ पर पत्थर तोड़ने वाली उस असहाय युवती के आत्म सम्मान और गौरव को कम नहीन होने देते। उसकी तन्मयता और कर्म के प्रति श्रद्धा और सम्मान की दृष्टि से देखते हैं। इस कविता के माध्यम से कवि ने उस मजदूरनी की दयनीय स्थिति का परिचय दिया है, जो तेज धूप में भीषण गर्मी और लूँ से परेशान अपने हथौड़े से पत्थर पर प्रहार करती हुई अपनी परिचय और क्षमता का बोध करवाती है। जहाँ मजदूरनी के लिए छायादार पेड़ भी नही है वही दूसरी ओर पास ही अमींरों के हवादार बंगलें हैं, यहाँ निराला समाजिक विषमता के कारण मानव-मानव में जो भेद है उसे चित्रित करते हैं । दमित, दलित और शोषित के प्रति उनकी संवेदना सहज ही देखी जा सकती है।

निराला समाज के यातनाग्रस्त मानव के दुख-दर्द को निजी समझते हैं। वैधव्यपूर्ण जीवन यापन करने वाली स्त्री के प्रति इनका दृष्टिकोण सहानुभूतिपूर्ण रहा है। इन्होंने विधवा

को इष्टदेव की मंदिर की पूजा कहकर उसकी निर्मलता और चारित्रिक पवित्रता को उजागर किया है तथा विधवा को यातनाग्रस्त करने वाले समाज पर तीक्ष्ण प्रहार किए हैं। 'दीप-शिखा सी शांत' कहकर अपने परिवार के लिए तिल-तिल कर जलने और बलिदान करने वाली स्त्री कहा है-

"वह इष्टदेव के मंदिर की पूजा सी,
वह दीप शिखा सी शांत, भाव में लीन।" 21

निराला का हृदय मोम का सा था जब कभी वे निर्धन, गरीब, दुखी पीड़ित जन को देखते तो उनके हृदय में वेदना उमड़ पड़ती थी और वे उसके पास जाते और गले लगा लेते थे सहानुभूति का यह कोश निराला के निजी जीवन और उनके साहित्य में देखने को मिलता है-

"देखा दुखी एक निज भाई
दुख की छाया पड़ी हृदय में मेरे
झट उमड़ वेदना आयी।"22

दलितों के उद्धार के लिए कवि सचेष्ट रहता है और ईश्वर से प्रार्थना करता है-

"दलित जन पर करो करुणा
दीनता पर उतर आये
प्रभु तुम्हारी शक्ति अरुणा।" 23

यहाँ भले ही कवि की निर्बलता दिखाई पड़े परंतु दलितों के प्रति उनके मन में जो

सहानुभूति, करुणा और संवेदना है वह स्पष्ट झलकती है, यहाँ शक्ति की सार्थकता से अभिप्राय दलितों-पीड़ितों का उद्धार एवं उनकी रक्षा से है। वे पीड़ित और शोषित मानव के पक्षधर थे । रामगोपालसिंह चौहान का मत है कि - "निराला ने अधिकांशतः दलित, दमित और शोषित को अपना स्वर दिया है। चाहे दमित, दलित, उपेक्षित वर्ग हो अथवा व्यक्ति। चाहे वह समाज व्यवस्था, सामाजिक और आर्थिक वैषम्य, सामाजिक वर्जनाओं, वर्ग विशेष अथवा व्यक्ति विशेष किसी से भी दबाया हुआ, पीड़ित और आर्थिक हो।" 24 निराला ने अपने काव्य में सामाजिक शोषण और उत्पीड़न के चित्र उपलब्ध कराये हैं। द्रष्टव्य है -

"यहाँ कभी मत आना
उत्पीड़न का राज्य, दुख ही दुख
यहाँ है सदा उठाना।"25

निराला की कविता में अभिजनों का एक और चेहरा उभर कर सामने आता है, जो मानवता के लिए कलंक है। मानव का मानव के प्रति निर्मम उपेक्षा का भाव है उसका वास्तविक चित्रण निराला कुछ इस प्रकार करते हैं---

" मेरे पड़ोस के वे सज्जन,
करते प्रतिदिन सरिता मज्जन,
झोला से पुए निकाल लिये,
बढ़ते कपियों के हाथ दिये,
देखा भी नहीं उधर फिरकर,
जिस ओर रहा वह भिक्षु इतर।"26

निराला ने एक ओर पीड़ित, दलित और शोषित की दयनीय स्थिति का वर्णन किया है वहीं दूसरी ओर उनकी इस स्थिति के लिए जिम्मेदार शोषकों के प्रति उनका आक्रोश स्पष्ट परिलक्षित होता है। पूँजीपतियों के शोषण वृत्ति के प्रति निराला का आक्रोश उनकी कविता में कुछ इस प्रकार उबल पड़ा है -

"अबे सुन बे गुलाब,
भूल मत जो पाई खुशबू, रंगों आब,
खून चूसा तुने खाद का अशिष्ट,
डाल पर इतराता है कैपीटलिस्ट।"27

यहाँ गुलाब शोषक पूँजीपति वर्ग का प्रतीक है, जिसे कैपीटिलिस्ट कहकर कवि ने आक्रोश व्यक्त किया है। जमींदारों के अनाचार और अत्याचार से पीड़ित किसानों से वे विप्लव का आह्वान भी करते है -

"रुद्ध कोष है, क्षुब्ध तोष,
अंगना अंग से लिपटे भी
आतंक अंक पर काँप रहे हैं
घनी,वज्र-गर्जन से बादल
त्रस्त नयन मुख ढ़ाँप रहे हैं
जीर्ण बाहु है शीर्ण शरीर,
तुझे बुलाता कृषक अधीर,
ऐ विप्लव के वीर।"28

सिर्फ दलितों और शोषितों के प्रति सहानुभूति और उनकी इस दशा के लिए जिम्मेदार शोषकों के प्रति आक्रोश करना ही कवि का उद्देश्य नही है। निराला कुछ हद तक उनकी इस दशा के लिए स्वयं दलितों और शोषितों को भी जिम्मेदार मानते हैं, उनका मानना है कि इन लोगों में संगठन का अभाव है उनका संगठित न होना ही उनकी सबसे बड़ी कमजोरी है। इसलिए वे जन सामान्य को संगठित होने का पाठ पढ़ाते हुए कहते हैं -

"संगठित हो जाओ

आओ बाहुओं में भर
भूले हुए भाइयों को,
अपनाओ अपना आदर्श तुम।"29

कवि को यह विश्वास है कि जनता के एकजूट हो जाने के बाद ही उनका शोषण रुक सकता है और तभी जनता शोषकों का मुकाबला भी कर सकती है। इस सच्चाई को निराला 'डिप्टी साहब आए' कविता में बड़ी खूबसुरती के साथ प्रस्तुत करते हैं। जहाँ जनता एकजूट होकर जमींदार के खिलाफ आवाज उठाती है और लछिमन की जमीन हड़प लेने वाली सच्चाई को प्रकाश में लाती है। इस प्रकार जमींदार की बनाई हुई योजना विफल हो जाती है -

"तब तक बदलू के कुल तरफदार आ गये
मन्नी कुम्हार, कुल्ली तेली, भकुआ चमार,
लच्छूनाई, बली कहार, कुल टूट पड़े,
कुछ नहीं हुआ, कुछ नहीं हुआ, होने लगा।
बदल गया रावरंग,
सब लोग सत्य कहने के लिए तुल गये।"30

निराला ने जन सामान्य की जिन्दगी को नजदीक से देखा ही नहीं बल्कि अनुभव भी किया और उसे अपने काव्य में अभिव्यक्त भी किया। निराला दीन-दुखी, गरीब, दलित, उपेक्षित, शोषित जन के मसीहा थे, और ये जन सामान्य ही उनके काव्य का आलम्बन हैं।

(ख) जन की सामाजिक , आर्थिक और राजनीतिक अवस्था

(क) जन की सामाजिक अवस्था - निराला ने अपने काव्य में देश तथा जन सामान्य की आर्थिक विषमताओं, पूजीवादियों की शोषक प्रवृतियों, सामाजिक रूढ़ीयों और

विश्वासों को सजीव और कहीं-कहीं व्यंगात्मक रुप देकर अपने संघर्षशील और क्रांतिकरी व्यक्तित्व का परिचय दिया है। सामाजिक व्यवस्था के खिलाफ उनका दृष्टिकोण भी स्पष्ट है वे उन सामाजिक मान्यताओं को मानने से इन्कार करते हैं जो समाज के लिए अहितकर हो। भारतीय समाज में अनेक रीति-रिवाज प्रचलित है जो उनके काल में भी थे और आज भी जिन्हें देखा जा सकता है। ये रीति-रिवाज सामाजिक क्षेत्र में रचे बसे हैं। बिबाह के समय पिता अपनी पुत्री को कुछ उपहार आदि देता था, वह इसलिए भी कि बिबाह के पश्चात् पुत्री का अधिकार पिता गृह से लगभग समाप्त सा हो जाता है और पिता अपनी सम्पत्ति का कुछ अंश देकर कन्या की विदाई करता था, जिससे कन्या अपने नये घर में भी सम्पन्न रहे। दहेज के पीछे सात्विक भावना थी। कन्या का खाली हाथ पति गृह में प्रवेश करना अपशकुन माना जाता था। लेकिन धीरे-धीरे इस प्रथा ने विकृत रुप धारण कर लिया। कन्या की श्रेष्ठता उसके गुण से नहीं बल्कि दहेज से आँकी जाने लगी। कन्या की कुरुपता और कुसंस्कार दहेज से आच्छादित होने लगे। दहेज देने की आवश्यकता की पूर्ति के लिए लोगों ने कर्ज लिए, सम्पत्ति बेची लेकिन फिर भी दहेज के लोभी भेड़ियों की माँग सुरसा के मुँह की तरह बढ़ती चली गई। निराला इस तत्कालीन समाजिक व्यवस्था के विरोधी के रुप में सामने आते हैं। स्वयं अपनी पुत्री सरोज की शादी में उन्होंने इन सामाजिक रीति रीवाजों का पालन न किया। सरोज के बिबाह में न तो इन्होंने मित्रों को आमंत्रित किया. न परिजनों, सगे सम्बन्धियों को बुलाया यहाँ तक कि बिबाह के गीत भी नहीं गाये गये। पंड़ित जी को भी नही बुलाया गया, उसके सारे कार्य निराला जी ने स्वयं किया। निराला के अनुसार दहेज देना मूर्खता है और व्यर्थ का अपव्यय दिखावा मात्र है, ढ़कोसले हैं। पूर्वजों की सम्पत्ति बेचकर बारात का खर्च वहन करना व्यर्थ है और समाज की नींव खोखली करने वाले हैं। निराला अपनी सम्पत्ति बेचकर मुर्ख बनना नहीं चाहते थे-

"पूर्वजों से मिला, करुँ अर्पन?
यदि महाजनों को , तो बिबाह
कर सकता हूँ, पर नहीं चाह
मेरी ऐसी दहेज देकर

मैं मूर्ख बनूँ, यह नहीं सुघर
बारात बुलाकर मिथ्या व्यय
मैं करुँ, नहीं ऐसा सुसमय।"31

निराला ने सामाजिक कुरितीयों पर भी जमकर प्रहार किया है। निराला ने धर्म के नाम पर हो रहे आडम्बरों, अंधविश्वासों और रूढ़ियों का विरोध किया। इन सभी क्षेत्रों में व्याप्त अनाचारों के प्रति वे सजग रहे और इसमे क्रांतिकारी परिवर्तन लाने का प्रयास किया। मनुष्य के वाह्य जगत् और आंतरिक जगत दोनों में परिवर्तन को निराला ने महत्व दिया सबसे पहले इन्होंने व्यक्ति के आंतरिक जगत में परिवर्तन को महत्व दिया, क्योंकि व्यक्ति का आंतरिक परिवर्तन ही वास्तविक परिवर्तन है। आंतरिक परिवर्तन के द्वारा ही बाह्य परिवर्तन सम्भव है और इसी के माध्यम से लोक की उन्नति और कल्याण की कल्पना की जा सकती है। समाज में सच्ची मानवता और जन सामान्य में चेतना लाई जा सकती है। जन सामान्य की चेतना के द्वारा ही सामाजिक विषमता को दूर किया जा सकता है, क्योंकि रूढ़ियाँ व्यक्ति की विचारधारा को संकुचित बनाती है और संकुचित विचारधारा ही समाजिक अव्यवस्था की जड़ है।

निराला का मानना था कि सामाजिक विषमता सामन्ती व्यवस्था की देन है। भेद - भाव, ऊँच-नीच, वर्णव्यवस्था इत्यादि इसी के प्रभाव हैं। समाजिक परंपरा, रूढ़ियों एवं अंधविश्वासों ने शूद्रों को दास बना दिया था। समाज में स्त्रियों की दशा अत्यंत दयनीय हो गई थी क्योंकि अंग्रेजों का शासन था पुरूष जाती अंग्रेजों का दास बनी हुई थी और स्त्री पुरूषों की दासी बनकर रह गई थी। इस तरह की दोहरी परतन्त्रता निराला को व्यथित करती है और उन्होंने इसका विरोध अपनी रचनाओं में किया है। धर्म और रूढ़ि में स्पष्ट भेद को स्वीकार करते हुए निराला कहते हैं - "सब प्रणालियाँ मनुष्यों ने हीं सोचकर समय-समय पर अपनी भलाई के लिए समाज में चलाई यदि हम इन्हें पकड़कर उन्हें ही अपना धर्म मान बैठे तो धोखा खायोंगे।" (सुधा 1930) धार्मिक अन्धविश्वासों और मान्यताओं के बन्धन से मुक्त होने

की जो आवाज बुलंन्द हो रही थी निराला ने उसपर बल दिया। पूँजीपति वर्ग जो धार्मिक होने का ढ़ोग करते हैं, चन्दन का तिलक लगाते हैं, लेकिन उनका हृदय स्वार्थपरता, छल-प्रपंच से परिपूर्ण रहता है। निराला ने इन पाखंड़ों से दूर रहकर स्वार्थरहित भक्ति पर बल दिया है। पाखण्डियों पर तीक्ष्ण व्यंग करते हुए निराला लिखते हैं-

"ढ़के हृदय में स्वार्थ लगाए उपर चंदन,
करते समय नदीश-नन्दिनी का अभिनन्दन
तुम्हें चढ़ाया कभी किसी ने था देवी पर।"32

इसी प्रकार स्वयं को दानी समझने वाले लोगों पर निराला ने जमकर प्रहार किया है। बन्दरों को पुए खिलाकर खुद को दानी कहलाने वाले, तुच्छ मनोवृति वाले व्यक्ति भूखे व्यक्ति की ओर मुँह उठाकर भी नहीं देखते इस तरह जानवरों को कुछ खिलाकर खुद को दानी कहे जाने वाले लोगों को निराला ढ़ोगीं और पाखण्डी कहते हैं -

"झोली से पुए निकाले,
बढ़ते कपियों के हाथ दिए।
देखा भी नहीं उधर फिर कर,
जिस ओर रहा वह भिक्षु इतर।"33

निराला ने समाज में प्रचलित उन अंधविश्वासों का भी वर्णन किया जिनमें शकुन - अपशकुन, शुभ-अशुभ आदि के आधार पर यह अनुमान लगाया जाता था की इससे कार्य की सिद्धि होगी और इससे कार्य की सिद्धि नहीं होगी। बिल्ली द्वारा रास्ता काटना, छीकना, खाली घड़ा लिए सामने आना व भरा घड़ा लिए हुए आगे आना, उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम सम्बन्धी दिशा विचार, यात्रा विचार, विधवा स्त्री के प्रातःकालीन दर्शन, उल्लू का बोलना, कौवे का सिर पर बैठना, कुत्ते द्वारा कान फड़फड़ाना, इत्यादि विभिन्न लक्षणों-उपलक्षणों के

आधार पर शुभ-अशुभ, शकुन अपशकुन माने जाते हैं। वैसे तो निराला जी को इनमें कोइ आस्था नहीं थी, फिर भी लोक-मानस का ध्यान रखकर लोक-विश्वास को कहीं-कहीं अपने काव्य में प्रकट कर ही दिया है -

"पायल की बूदों में रुन-झुन,
क्या भरे घड़े के मिले सगुन।"34

इसके साथ ज्योतिष के सम्बन्ध में निराला का दृष्टिकोंण स्पष्ट है। वे इसमें विश्वास नहीं रखते थे। निराला ने ज्योतिषियों और ज्योतिष विद्या का मजाक उड़ाया है। यह बात इस तथ्य से स्पष्ट हो जाता है, कि जब निराला की पहली पत्नी का देहान्त हो जाता है तब इनकी सास इनके दूसरे बिबाह के लिए कहती हैं और कन्या के निकट के सम्बन्धियों को भी बुला लेती हैं। लेकिन निराला तो बिबाह करना ही नहीं चाहते थे। उन्होंनें विवाह का प्रस्ताव लेकर आने वालों से यह कहकर पीछा छुड़ा लिया कि मैं मंगली हूँ-

"मैं हूँ मंगली मुड़े सुनकर"

निराला के पिता ने इनकी जन्म कुण्डली बनवाई थी। इसमें इनके दो बिबाह लिखे हुए थे, जिसको पढ़कर निराला हँसते और उसका उपहास करते रहते थे। वे अपने भाग्य अंक को खण्डित करना चाहते थे। उनका मानना था कि आखिर उनकी अपनी इच्छा के विरुद्ध दूसरा बिबाह कैसे हो सकता है -

"मोढ़े पर ले कुण्डली हाथ
अपने जीवन की दीर्घ गाथ,
पढ़ लिखे हुए शुभ दो बिबाह
हँसता था मन में बढ़ी चाह
खण्डित करने को भाग्य अंक।"35

अपने इस भाग्य अंक को सोचते सोचते और उसे खण्डित करने की इच्छा मन में लिए हुए अपनी कुण्डली को जिसे वे अब तक अपने हाथों में लिए हुए थे अपनी पुत्री सरोज को दे देते हैं, जैसे यह कोई साधारण सा कागज का टुकड़ा मात्र हो -

"सोचता हुआ बिबाह बन्धन।
कुण्डली दिखा बोला - ए-लो
आयी तू, दिया कहा खेलो।"36

सरोज इसे खेलते-खेलते फाड़ देती है और उन टुकड़ों पर बैठ जाती है। लेकिन निराला पर इसका कोई प्रभाव नही पड़ता है, अपितु वे प्रसन्नचित्त दिखाई दे रहे थे, क्योंकि उनके लिए तो उस कुण्डली का कोई महत्व ही नही था। उन्हें इस बात की तसल्ली थी कि कम से कम उस कुण्डली ने कुछ समय के लिए सरोज का दिल तो बहलाया।

"संकेत किया मैंने अखिन्न
जिस ओर कुण्डली छिन्न-भिन्न
देखने लगी वे विस्मय भर
तू बैठी संचित टुकड़ों पर।"37

इसी तरह निराला जादू टोनों में विश्वास नहीं रखते थे। लोक संस्कृति में प्रायः यह विश्वास किया जाता है कि तन्त्र-मन्त्र के प्रयोग से मनवांछित वस्तु प्राप्त की जा सकती है। ऐसा भी माना जाता है कि जादू टोनों से एक दूसरे को परेशान किया जा सकता है। इसलिए लोग तान्त्रिकों के पास चक्कर लगाया करते हैं, लेकिन निराला जी को इस तन्त्र विद्या और जादू टोनों में जरा भी विश्वास नहीं है।

तीज-त्योहार भारतीय संस्कृति की आत्मा हैं। भारतीय समाज में इन त्योहारों के प्रति लोगों में अटूट आस्था पायी जाती है। इन त्योहारों से भारतीय संस्कृति की अस्मिता की

झलक मिलती है जो जातीय भेदभाव को मिटा कर पारस्परिक सौहार्दपूर्ण वातावरण बनाते हैं। हमें मिलजुल कर रहने का सन्देश देते हैं। जिससे समाज में एकता उत्पन्न होती है यही कारण है कि निराला जी का इन त्योहारों में अटूट आस्था रही है। निराला धार्मिक प्रवृति के सच्चे साधक थे। इसी आधार पर इन्होंने लोक में एकता स्थापित करने का प्रयास किया। इन्होंने इस तथ्य को स्वीकार किया कि हिन्दुओं और मुसलमानों में परस्पर घृणा का भाव है। और इसकी जड़ें इतिहास में है, अधिकांश हिन्दू समझते हैं कि वे विजित हैं और अधिकांश मुसलमान समझते हैं कि वे विजेता रह चुके हैं। इस घृणा के अस्तित्व को स्वीकार करने वाले राजनीतिज्ञों का अभाव न तब था न अब हैं, अपितु इनकी संख्या में अब तो और बृद्धि हो गई है। निराला इनसे भिन्न इस बात में थे कि वे इस घृणा को अज्ञानजन्य और क्षणिक मानते थे। उनसे भिन्न मैत्री के भाव को वे ज्ञानजन्य और स्थायी मानते थे। लौकिक एकता के लिए निराला जी हिन्दू-मुसलमान की एकता को नितान्त आवश्यक मानते थे। उनका विचार था कि आपस के भेद-भाव को भुल कर दोनों सम्प्रदाय के लोग ही राष्ट्र की उन्नत्ति में अपना पूर्ण योगदान दे सकते हैं। इसलिए निराला ने अपने काव्य में त्योहारों को महत्व दिया क्योंकि भारतीय संस्कृति में कुछ ऐसे त्योहार हैं जिनमें आपस के सभी भेद-भाव को भुलाकर सभी सम्प्रदाय के लोग मिलजुल कर हिस्सा लेते हैं। इन्होंने फाग और होली को सर्वाधिक महत्व दिया क्योकि इस दिन हर कोई पारस्परिक वैरभाव को भुल कर सौहार्दपूर्ण जीवन व्यतीत करता हैं। निराला प्राकृतिक वातावरण के साथ कल्याणकारी होली का चित्रण कुछ इस प्रकार करते हैं-

"कोयलें मंजरी की शाखों से
गायी सुमंगल होली तुम्हारी।"38

फाल्गुन महीने में जब आम बौर जाते हैं और भंवरे वनों में फूलों पर मड़राने लगते हैं। लोग फाग की आमद और प्राकृतिक वातावरण को देखकर मदमस्त हो जाते हैं और सभी बन्धनों को भुला देते हैं--

"फूटे हैं आमों में बौर,
भौंर वन वन टूटे हैं।
होली मची ठौर-ठौर,
सभी बन्धन छूटे हैं।"39

फाल्गुन महीने में लोक-सामान्य में चारों ओर उल्लासमय वातावरण होता है। निराला ने लोक के इस उल्लास का यथार्थ चित्रण किया है-

"फागुन के रंग राग,
बाग-वन फाग मचा है।
भर गये मोती के झाग,
जनों मे मन लुटे हैं।"40

लोग वैर भाव सुख दुख और अपनी व्यक्तिगत तथा समाजिक वेदना को भुलकर एक दुसरे को गुलाल लगाते हैं। चारों तरफ बस एक ही रंग में रंगे लोग होते है गुलाल ही गुलाल --

"माथे अबीर के लाल
गाल सेंदूर के देखे,
आँखें हुई है गुलाल,
गेरु के ढ़ेले कुटे हैं।"41

होली के दिन वैसे तो लोग टोलियाँ बना कर होली खेलते हैं, लेकिन यहाँ निराला नैतिकता के मामले में सतर्क नजर आते हैं। वे उचित अनुचित का संकेत देते हैं। होली खेलने वाली स्त्री के माध्यम से वे नैतिकता का परिचय बहुत ही सहज ढ़ंग से करा देते हैं-

"खेलूँगी कभी न होली
उससे जो नही हमजोली।
यह आँख कहीं कुछ बोली,
यह हुई श्याम की तोली।"42

भारतीय समाज में विभिन्न प्रकार की धारणाएँ प्रचलित है। निराला ने अपने काव्य में इन्हें भी स्थान दिया है। भारतीय समाज एवं संस्कृति में पाप-पुण्य की धारणा प्राचीन काल से लेकर आज तक मानी जाती रही है। निराला ने 'पंचवटी प्रसंग' नामक कविता में वनवासियों के चित्तवृत्तियों में परिवर्तन दिखाकर इस बात की पुष्टि की है। राम-लक्ष्मण और सीता के पावन चरित्र एवं व्यवहार को देखकर ये वनवासी इन्ही के अनुसार आचरण करते हैं, और जन की सेवा करते हैं। जो वास्तव में अपराधी प्रवृति वाले होते हैं--

"हत्याएँ हजारों जिन हाथों ने की होगी
सेवा करते हैं वही हृदय के कपाट खोल,
मीठे फल शीतल जल लेकर बड़े चाव से।
जड़ों में हुआ है नव जीवन-संचार धन्य।"43

निराला का इश्वर में पूर्ण आस्था है। उनका मानना है कि एकमात्र इश्वर ही संसार के मोह माया में पड़े लोगों का उद्धार कर सकता है, इसलिए वे रात-दिन ईश्वर का गुणगान करने का उपदेश देते हैं तथा समाज के दुखों का अवसान करने की प्रार्थना करते हैं। --

"हरि का मन से गुणगान करो,
तुम अन्य विधान करो न करो।
निशिवासर ईश्वर ध्यान करो।
ठग को जग-जीवन दान करो
तुम अन्य प्रदान करो न करो।

दुख की निशि का अवसान करो।"44

परंपरागत जाति प्रथा की बुराईयों से निराला अवगत थे। इनके काव्य में जाति प्रथा पर तीव्र कटाक्ष देखा जा सकता है। विशेष कर उच्च जाति के व्यक्तियों पर इन्होंने व्यंग्य-बाण छोड़े हैं। इनकी कविताओं के अध्ययन से यह समझा जा सकता है कि वे वर्णाश्रम धर्म एवं व्यवस्था में परिवर्तन चाहते हैं तो दूसरी ओर आर्य सभ्यता एवं संस्कृति के अस्त रुप को देखककर चिन्तित दिखाई देते हैं ---

"वह आर्य धर्म वह शिरोधार्य वैदिक समता,
पाटलीपुत्र की बौद्ध-श्री की अस्त रुप,
वह हुई और भू-हुए जनों के और भूप।"45

(ख) जन की आर्थिक अवस्था - निराला के काव्य में जनता की आर्थिक दुर्गति को स्पष्ट देखा जा सकता है। निराला की कविताएँ उस समय लिखी गई जब देश पराधीन था। अतः जनता पर दोहरे शोषण का भार था। एक ओर विदेशी सत्ताधारी थे तो दुसरी ओर अपने देश के पूँजीपति, स्वार्थी जमींदार और अंग्रेजों के चाटुकार और नमक हराम अर्थात जनता के नेता। शोषक का नया एक चेहरा उभर कर सामने आता है जो अपने स्वार्थ के लिए कुछ भी करने को तैयार है, जिसे जनता की कोई परवाह नहीं है। 'राजे ने अपनी रखवाली की' कविता में राजा के माध्यम से कवि यह बताना चाहता है, कि किस प्रकार राजा जनता का शोषण करता है, लेकिन जनता आँख कान बंद करके शोषित होती रहती है और चुप रहती है। दृष्टव्य है -

"धर्म का बढ़ावा रहा धोखे से भरा हुआ।
लोहा बजा धर्म पर, सभ्यता के नाम पर।
खून की नदी बही।
आँख-कान मूंदकर जनता ने डुबकियाँ लीं।"46

यहां नेता अपने स्वार्थ के लिए धर्म के नाम पर झगड़े फसाद कराता है। जिसमें गरीब लोग ही मारे जाते हैं, लेकिन जनता कुछ नहीं करती। शायद इसलिए कि विरोध करने पर भी मौत गरीब जनता की ही होनी है। निराला ने ऐसे नेताओं का पर्दाफास किया है, जो गरीबों के हितैषी होने का झूठा नाटक करते हैं। और गरीबों को लूटते हैं -

"मेरे समाज में बड़े-बड़े आदमी हैं।
एक से हैं एक मूर्ख ,
उनको फँसाना है,
ऐसे कोई साला एक धेला नहीं देने का।"47

निराला ने अपने काव्य में अर्थाभाव के थपेड़ों से पीड़ित व्यक्ति को बड़ी सहानुभूति के साथ रुपायित किया है। कवि पीड़ित शोषित और अत्याचार सहने वाले आम आदमी के लिए अपने दिल में गहरी संवेदना पिरोये हुए है। जिससे गरीबी तथा बेकारी जैसी समस्याएँ उनके काव्य में सच बनकर अभिव्यक्ति पाती हैं। फुटपाथ पर जीवन व्यतीत करने वालों के प्रति आत्मीयता का भाव रखते हिए इन्होंनें दृढ़ संकल्प होकर कहा है -

"राह पर बैठे उन्हें, आबाद तू जबतक न कर
चैन मत ले, गैर को बर्बाद जबतक तू न कर।"48

समाज की आर्थिक स्थिति समस्त सामाजिक विषमता का मूलभूत कारण है। अर्थ-व्यवस्था मानव जीवन की कार्य प्रणाली को तो प्रभावित करती हीं है साथ ही लोक-जीवन भी उससे अछुता नहीं रहता और कवि जो कि एक सामाजिक एवं भावप्रवण प्राणी होता है, वह भी इसी दायरे में आता है। कवि समाज की आर्थिक स्थिति से प्रभावित होता है और उसकी अभिव्यक्ति अपने काव्य में करता है। कवि सम्पन्नता और विपन्नता के आधार पर अपना लक्ष्य निर्धारित करता है। अतः विपन्नता लोक-जीवन में विभिन्न कठिनाइयाँ

तथा अत्यन्त विकट स्थिति पैदा करती है। कवियों ने आर्थिक विषमता से उत्पन्न इन समस्याओं को सटीक बाणी के माध्यम से प्रस्तुत किया है तथा उसके पीछे छिपी षड्यन्त्रकारी शक्तियों का पर्दाफाश किया है -

"श्वानों को मिलता वस्त्र दुध, भूखे बालक अकुलाते हैं।
माँ की हड्डी से चिपक ठिठुर, जाड़ों की रात बिताते हैं।।
युवती की लज्जा बसन बेच, जव व्याज चुकाये जाते हैं।
मालिक जब तेल फुलेलों पर पानी या द्रव्य बहाते हैं।।
पापी महलों का अहंकार देता मुझको तब आमंत्रण।।"49

इन षड़यन्त्रकारी शक्तियों ने आम आदमी को चौराहे पर लाकर खड़ा कर दिया है। दिन रात कठोर परिश्रम करने के बाद भी वह दाने दाने को मोहताज है, उसके पास न तो पहनने को बस्त्र है न ही रहने के लिए घर। भूख और वेरोजगारी ने उसे लाचार कर दिया है। ऐसी स्थिति में आम आदमी अपने बच्चों को शिक्षित करने में असमर्थ है, क्योंकि जब खाने को रोटी न हो तो पहली प्राथमिकता रोटी जुटाने की होती है। ऐसे में बच्चों की शिक्षा के विषय में सोचने का अवसर भी दीन-हीन वर्ग के लोगों को नहीं मिलता। और अगर कुछ पढ़ लिख लेते भी हैं तो इस भ्रष्ट शासन व्यवस्था में उनको रोजगार प्राप्त नहीं होता।

निराला ने स्वतंत्रता आन्दोलन के समय अनुभव किया कि नेता-वर्ग जो भारत को अंग्रेजों के अत्याचार से मुक्त करने की बड़ी-बड़ी बातें करते थे। स्वयं को देश का रक्षक कहते थे, वे ही देश को लुटने वाले भक्षक बने हुए हैं।

आर्थिक विपन्नता से उत्पन्न सभी समस्याओं से निराला पूर्णतः अवगत थे। अर्थाभाव के कारण ही वे अपनी पुत्री का अच्छी तरह पालन पोषण करने तथा चिकित्सा कराने में असमर्थ रहे। इसी वजह से उन्होंने 'सरोज स्मृति' की रचना की और अपने जीवन को निरर्थक बताया और उसे कोसा है -

"धन्ये मैं पिता निरर्थक था
कुछ भी तेरे हित न कर सका
अस्तु मैं उपार्जन में अक्षम
कर नहीं सका पोषण उत्तम। "50

निराला की कविताएँ निजी जीवन की वेदना को ही महत्व नही देती अपितु आर्थिक रुप से विपन्न एवं शोषित, पीड़ित व्यक्तियों की पीड़ा को समग्रता से व्यक्त करती है। आर्थिक विषमता के कारण ही धनी गरीब के बीच की दुरी बढ़ती गयी इसी दुरी को कम करने के लिए निराला ने धनी लोगों को कुछ इस प्रकार सम्बोधित किया है -

"मिला तुम्हें सचमुच अपार धन
पाया कृश उसने कैसा तन
क्या तुम निर्मल नही अपावन
सोचो तो सम्भलो। "51

निराला ने अपने जीवन में जो देखा, अनुभव किया उसी भोगे परखे जीवन मे ही लोगो की दयनीय स्थिति और उनकी पीड़ा को देखकर उनके हृदय में सहानुभूति उत्पन्न हुइ, जिसकी अभिव्यक्ति इनके काव्य में देखी जा सकती है। 'चूकि यहाँ दाना है' नामक कविता में लोक जीवन के यथार्थ की सहज अभिव्यक्ति हुइ है -

"आँख है लगी हुइ
जान है, जीवट भी है भगी हुइ
दोनों आँखों वाला है, काना है,
चूँकिं यहाँ दाना है।
अम्मा है, बप्पा है,
झापड़ है और गोलगप्पा है। "52

निराला भेदरहित लोक-जीवन एवं लोक-कल्याणकारी समाज की प्रतिष्ठा के पक्षधर हैं। आर्थिक विषमता को दूर करने के लिए संघर्ष एवं क्रांति को आवश्यक मानते हैं। इसलिए इन्होंने शोषण, पराधीनता, भूख, उत्पीड़न इत्यादि का वर्णन किया है ताकि व्यक्ति के मन में क्रांतिकारी विचार उत्पन्न हो और वह शोषणकारी नीतियों का विरोध कर सके। निराला कतई नहीं चाहते कि समाज में किसी भी व्यक्ति की स्थिति दयनीय हो और वह अपनी जठराग्नि को शांत करने के लिए किसी के सामने हाथ फैलाए-

"द्वार-द्वार फिर कर
भीख माँगता कर फैलाकर। "53

लोक-जीवन और कविता का परस्पर अभिन्न सम्बन्ध है। उसकी संचालन शक्ति की प्रमुखता राजनीतिक चेतना में विद्यमान है। इस तरह से देखा जाए तो लोक-रहित राजनीति और राजनीति रहित काव्य का कोई महत्व नहीं रह जाता। अतः कविता और राजनीति का लोक जीवन से अटुट सम्बन्ध को नकारा नहीं जा सकता। सामान्य जन-जीवन भी इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। कवि राजनीतिक संदर्भों का अध्ययन करता है और उसको कविता का रुप देता है जो अपने आप में एक कठिन कार्य है। लेकिन यह एक सार्थक कवि का पौढ़ एंव सार्थक कर्म है।

(ग) जन की राजनीतिक अवस्था - प्रत्येक सामाजिक प्राणी किसी न किसी रुप में राजनीति से सम्बन्ध रखता है। उसका यह सम्बन्ध अनैच्छिक होने पर उसे पीड़ा पहुचाता है, क्योंकि विवशता से किया गया कार्य व्यक्ति को आनन्द प्रदान नहीं कर सकता। पूँजीवादी व्यवस्था व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति के लिए जन-साधारण का शोषण करती है जिससे आम जनता पीड़ा का अनुभव करती है। जनमानस की यही पीड़ा कविता के माध्यम से लोक जीवन की मानसिक अभिव्यक्ति प्राप्त करती है। कवि सम-सामायिक राजनीतिक संदर्भ को जनता के सामने प्रस्तुत करता है ताकि जनता को राजनीति का

समुचित ज्ञान हो सके और आम जनता अपने अधिकारों को जान कर जागरुक हो और उसे प्राप्त कर सके साथ ही जन-सामान्य को राजनीति के भले और बुरे पक्ष की पहचान हो सके। जनता भ्रष्ट राजनीतिक गतिविधियों को पहचान कर तथा लोक विरोधि गतिविधियों नीतियों के प्रति संगठित होकर उसके विरोध का संकल्प ले सके तथा ऐसे भ्रष्ट शासन से मुक्ति का मार्ग खोज निकाले।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व भारतीय जनता का मुख्य उद्देश्य विदेशी सत्ता से मुक्ति प्राप्त करना था। इसके लिए यह नितांत आवश्यक था कि सभी लोंगों मे एकता, देश प्रेम और श्रद्धा -भाव हो। इस देश प्रेम को जागृत करने के लिए मातृभूमि की माँ के रुप मे कल्पना की गई , इसलिए निराला ने मातृभूमि की वंदना की, उसके अतीत के गौरव का गान किया साथ ही इस भूमि के वैभव का उल्लेख करके इसके प्रति श्रद्धा भाव को जागृत किया।

निराला के काव्य में विदेशी सत्ता से मुक्ति एवं स्वतंत्रता प्राप्ति की प्रबल आकांक्षा रही है। भारत माता की वंदना कवि कभी विश्वरुपिणी के रुप में करता है तो कभी उसे भारत माता में सरस्वती का रुप दिखाई देता है। इन्होंनें भारत के अतीत की गौरव गाथा जन-सामान्य के समक्ष प्रस्तुत किया जिससे लोंगों में अपने देश के प्रति प्रेम भावना उत्पन्न हो सके और अंग्रेजी शासन की शोषणकारी तथा दमनकारी नीतियों का विरोध करने के लिए जनता संगठित हो। उस समय अंग्रेजी शासन की नीतियों ने जन मानस के हृदय में दीनता एवं हीनता की भावना भर दी थी। इस हीनता ने भारत के गौरवशाली इतिहास के यश रुपी चमकते सूर्य को अस्ताचलगामी कर दिया था। लोगों में उभरते हुए निराशा को देखकर निराला व्यथित हुए बिना कैसे रह सकते थे -

"हमारा डूब रहा दिनमान
मास-मास, दिन-दिन, प्रतिपल
उगल रहे हो गरल-अनल

जलता यह जीवन असफल
हिम-हत पातों सा असमय ही
झुलसा हुआ शुष्क निश्चल। "54

निराला ने इस सत्य को पहचान लिया था कि तत्कालीन शासन व्यवस्था पूँजीवाद पर आधारित थी। लोक चेतना के राजनीतिक पक्ष की पृष्टभूमि सामाजिक-आर्थिक पक्षों पर आधारित थी और पक्षों को आधार बनाकर निराला की कविता अग्रसर होती हुई देखी जा सकती है। तत्कालीन लोक-जीवन में राजनीति का जितना प्रचार प्रसार था, निराला के काव्य में लोक-चेतना की प्रबलता उतनी हीं अधिक देखने को मिलती है। आज भी नेता वर्ग अपने स्वार्थ सिद्धि के लिए लोंगों के पास वोट माँगने जाते हैं उनसे तरह तरह के वायदे करते हैं, लेकिन सत्ता हासिल करने के वाद सारे के सारे वायदे ऐसे भूल जाते हैं जैसे कभी वे लोगों के पास गये हीं न थे और न उन्हें आम जनता से कोई सरोकार है। जनता की दयनीय और संकटपूर्ण स्थिति की ओर देखते भी नही। निराला की निम्न पंक्तियों में कुछ इसी तरह का भाव देखने को मिलता है-

"काले-काले बादल आये न आये वीर जवाहर लाल
कैसे-कैसे नग मण्डलाए न आये वीर जवाहर लाल
मँहगाई की बाढ़ आयी, गाँठ की छूटी गाढ़ी कमाई
भूखे नंगे खड़े शरमाए न आये वीर जवाहर लाल। "55

असल में पूँजीपति वर्ग और राजनीति का परस्पर गहरा सम्बन्ध है, पूँजीपति वर्ग इस तरह की शासन व्यवस्था में सहयोग देते हैं ताकि उनकी शोषणकारी प्रवृति में किसी तरह का व्यवधान न आये और आम जनता का शोषण वे निर्वाध रुप से करते रहें जिससे उनकी अपनी तिजोरी भरी रहे और जनता भुख से विलखती रहे। ऐसा इसलिए भी की अगर जनता को मौका मिल जाए तो वह सजग हो जायेगी इसलिए उन्हें भूखे रखने का एक फायदा यह

भी था कि वह बस भूख मिटाने के लिए रोटी जुगाड़ करने में लगी रहे और पूँजीपति वर्ग उनसे बिना किसी कठिनाई के लाभ उठाती रहे। पूँजीपति वर्ग की यही नीति लोक चेतना के मार्ग में बाधा डालती है। पूँजीपति वर्ग और राजनेताओं की पोल खोलते हुए निराला लिखते है -

"आजकल पण्डित जी देश में विराजते हैं
माता जी को स्वीट्जरलैण्ड के अस्पताल
तपेदिक के इलाज के लिए छोड़ा है
बड़े भारी नेता हैं, कुइरीपूर गाँव में ब्याख्यान देने को
आये हैं मोटर पर, लन्दन के ग्रेजुएट, एम, ए. और बैरिस्टर
बड़े बाप के बेटे, बीसियों परतों के अन्दर खुले हुए
एक-एक पर्त बड़े-बड़े विलायती लोग। "56

"निराला जी इस कूटनीति का विरोध करने के लिए आम आदमी की शक्ति को संगठित करते हैं। यहीं से इनका राजनीतिक पक्ष उजागर होता है, जो लोक चेतना का ही एक आयाम है। इस प्रकार कवि लोक व्यवस्था की स्थापना करने के सुनहरे स्वप्न देखने लगता है। इनके चिन्तन की विशेषता थी कि उन्हें ब्रिटिश साम्राज्यवाद की आर्थिक नीति, उसके राजनीतिक दाव-पेंच, सांस्कृतिक मामलों में उसके पस्तक्षेप को पहचाना, गहराई से उसका विश्लेषण किया। और देश की राजनीतिक, सांस्कृतिक प्रगति के लिए मार्ग निश्चित किया। "57 लोक चेतना के विकास के इस मार्ग को शासन व्यवस्था तक पहुँचाकर आम आदमी को निराला कुछ इस तरह जागृत करते हैं -

"जल्द-जल्द पैर बढ़ाओ आओ-आओ
यहाँ सेठ जी बैठे थे
बनिये की आँख दिखाते हुए

उसके ऐंठाए ऐंठें थे
धोखे पर धोखा खाते हुए।
बैंक किसानों का खुलवाओ।"58

"ब्रिटिश शोषण से मुक्ति प्राप्त करने के एवं स्वराज्य स्थापना हेतु महात्मा गाँधी ने अहिंसा के मार्ग को अपनाया क्न्तु इसकी प्रतिक्रिया में बंगाल में हिंसा प्रारंभ हुई इसे क्रांति का नाम दिया गया।"59 निराला में प्रारंभ से ही क्रांति की भावना निहित रही है, बचपन से ही वे स्वभाव से क्रांतिकारी व्यक्तित्व के रहे और इसी कारण स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए हिंसा का समर्थन और बलिदानी की भावना उनके काव्य में स्पष्ट परिलक्षित होता हुआ दिखाई देता है। निराला क्रांति का आह्वान करे हुए कहते हैं-

"एक बार बस और नाच तू श्यामा
भैरवी भैरवी तेरी झंझा
तभी बजेगी मृत्यु लड़ायेगी जब तुझ से पंजा
लेगी कड्ग और तू खप्पर,
उसमें रुधिर भरूँगा माँ
मैं अपनी अंजली भर-भर।"60

"इस क्रांतिकारी कदम को जब विद्यार्थियों ने उठाया, शस्त्र संघर्ष किया तो इलाहाबाद में ब्रिटिश सरकार ने उनका दमन किया।"61 डॉ. पूर्णचन्द शर्मा के अनुसार - "इस विद्रोह की विफलता के बाद भी स्वतन्त्रता की भावना दमित नहीं हुई। यह धीरे-धीरे पनपती रही। कालान्तर में गाँधी ने स्वतन्त्रता आन्दोंलन का संचालन किया। सत्य अहिंसा एवं असहयोग पर आधारित इस आन्दोंलन से देश का जीवन अछुता कैसे रह सकता था।" गाँधी के इस आन्दोंलन को सफल करने के लिए भारतीय जनमानस आत्मबलिदान करने को खुशी से तैयार हो गया लेकिन कुछ स्वार्थी भारतीय एसे भी थे जो अपने स्वार्थ के लिए ब्रिटिश शासन

की चाटुकारी करते थे। चाटुकारों का यह वर्ग अंग्रेजों की चरण वंन्दना करके आत्म बलिदान के लिए उद्यत भारतीयों को हतोत्साहित करता रहता था। निराला ने इस विशेष वर्ग को भी निशाना बनाया और उसे सम्बोधित करते हुए कहते हैं -

"चूम चरण मत चोरों के तू,
गले लिपट मत गोरों के तू,
झटक-पटक झंझर को झटपट झोंक भाड़ में मान।"62

निराला ने अपने काव्य में राजनीति की सभी समस्याओं को उद्‌घाटित किया है और उसका स्पष्ट परिणाम आम जनता की जीवन शैली को पर परिलक्षित होते हुए देखते हैं। इसी कारण उन्होंने राजनीतिज्ञों पर करारा व्यंग किया है। इस देश में राजनीति का स्वरुप धनीवर्ग द्वारा निश्चित होता रहा है, और यह धनीवर्ग वास्तव में जन-चेतना का विरोधि रहा है। निराला ने इस शासन सत्ता की सत्यता की पहचान की और लोक-चेतना का स्वर प्रबल किया। कवि ने शोषक वर्ग के प्रति घृणा के भाव व्यक्त किए हैं क्योंकि एक तरफ तो यह वर्ग सामान्य जनता का शोषण करता है जूसरी तरफ राजनीतिक व्यवस्था को अपने हाथों की कठपुतली बना कर अपने स्वार्थ के लिए उपयोग करता है। निराला की इस वर्ग के प्रति घृणा का यही भाव 'कुकुरमुत्ता' नामक कविता में व्यंग के रुप में व्यक्त हुआ है -

"अबे सुन बे गुलाब
भूल मत जो पायी खुशबू रंगों आब
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट
डाल पर इतरा रहा कैपीटलिस्ट
कितनों को तूने बनाया गुलाम।"63

निराला ने तत्कालीन शासनवर्ग की दुर्बलताओं को पहचाना और उसे अपनी कविता के माध्यम से अभिव्यक्त भी किया। स्वतन्त्रता आन्दोंलन की सफलता के लिए निराला ने

महत्वपूर्ण योगदान दिया। राष्ट्रीय आन्दोंलन में गति लाने के लिए उन्होंने ओजपूर्ण कविता लिखी। 'जागो फिर एक बार' कविता में हताश हो चुके वीरों में पुनः शक्ति का संचार लाने का निराला प्रयास करते हैं, ताकि भारतवर्ष को इस अन्यायी शासन से राहत मिल सके। इन्होंने भारतीयों को शेर और अंग्रेजों को सियार कहकर युवाओं को उनकी कुटिलता से अवगत करने का प्रयास किया और युवाओं को संगठित होने का आह्वान अपनी ओजपूर्ण बानी में किया -

"सवा-सवा लाख पर
एक को चढ़ाऊँगा,
गोविन्द सिंह निज
नाम जब कहाऊँगा।
किसने सुनाया यह वीर-जन-मोहन अति
दुर्जय संग्राम-राग, फाग का खेला रण
बारह महीनों में शेरों की माँद में,
आया है आज स्यार -
जागो फिर एक बार।"64

निराला जी क्रान्तिकारी कवि हैं। शोषण से मुक्ति एवं विदेशी शासन के बंधनों से देश को मुक्त करने के लिए क्रान्ति को आवश्यक मानने वाले निराला का मत था कि सत्ता में परिवर्तन लाने के लिए हिंसा और रक्तपात को रोकना असम्भव हैं। निराला इस विषय पर लिखते हैं -

"देखते नहीं वेग से हरहराती है।
नग्न प्रलय का सा ताण्डव हो रहा
चाल कैसी मतवाली लहराती है
प्रकृति को देख मींचते आँखे

त्रस्त खड़ी हैं- थर्राती हैं।"65

भारत विभिन्न धर्मों और सम्प्रदायों का देश है। यहाँ अलग-अलग भाषाओं को बोलने वाले लोग रहते हैं। इस विभिन्नता में भी यहाँ एकता है। अंग्रेजों ने इस विभिन्नता का फायदा उठाया और फूट डालो और राज करो इस नीति से भारत में शासन कर रहे थे, पर धीरे-धीरे भारतीय इस नीति को समझ गये और संगठित होकर उनका मुकाबला करने को तैयार हो गये। इस दिशा में भी निराला का महत्वपूर्ण योगदान रहा -

"संगठित हो जाओ-
आओ, बाहुओं में भर
भूले हुए भाइयों को
अपनाओ अपना आदर्श तुम।"66

गाँधी जी ने देश की एकता और अखण्डता के लिए अथक प्रयास किया। इन्होंने दलित, शोषित और निम्न वर्गीय लोगों के प्रति सहानुभूति व्यक्त की। तत्कालीन राजनीति में कांग्रेस का बोलबाला था, लेकिन स्वाधीनता के पहले ही इसका विघटन शुरु हो गया था। इस पार्टी में राजा महराजा एवं जमींदारों की अधिकता थी। यही वर्ग गरीब जनता का शोषण कर रहा था उन पर अनेक प्रकार के अत्याचार करता था और यही वर्ग आज उनका हितैषी बनकर मंच पर विराजमान था। निराला ने इस दोहरी नीति को अपने निशाने पर लिया और उसका पर्दाफाश किया। इसकी सार्थक अभिव्यक्ति इस प्रकार की -

"राजे ने अपनी रखवाली की
किला बनाकर रहा
बड़ी-बड़ी फौजें रखी।
चापलूस कितने सामन्त आये
मतलब की लगड़ी पकड़ते हुए।"67

निराला ने देखा कि तत्कालीन प्रशासक एवं जमींदार जनता के द्वारा विरोध करने पर उनके साथ अत्याचार करते थे उन्हें अनेक प्रकार की यातनाएँ देते, उनके साथ अमानवीय व्यवहार करते इतना ही नहीं आम जनता को गोली भी मारने में भी इस वर्ग को हिचकिचाहट महसूस नहीं होती थी। शासन व्यवस्था के इस उत्पीड़न को व्यक्त करते हुए निराला कहते हैं -

"जमींदार का गोड़इत
दोनाली लिए हुए
एक खेत फासले से
गोली चलाने लगा
भीड़ भागने लगी
कांस्टेबल खड़ा हुआ ललकारता रहा।"68

निराला ने जमींदारों और राजाओं की कूटनीति को जन-सामान्य के समक्ष प्रस्तुत किया, और यह बताने का प्रयास किया कि किस तरह वे स्वयं को आम जनता का हितैषी बताते हैं लेकिन वास्तविकता कुछ और ही है। इन्होंने प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करके लोक चेतना जागृत करने का प्रयास किया ताकि लोग स्वयं इसे समाप्त करने के लिए तथा इसमें सुधार लाने के लिए संघर्ष करे। किसान, मजदूर एवं निम्न वर्ग पर तरह-तरह के अत्याचार किए जाते थे, उनको पुलिस का खौफ दिखाया जाता था। इस भ्रष्टचारिता को उजागर करते हुए निराला लिखते हैं -

"जमींदार का सिपाही लट्ठ कंधे पर डाले
आया और लोगों की ओर देखकर कहा
डेरे पर थानेदार आये हैं,
डिप्टी साहब ने चन्दा लगाया है, एक हफ्ते के अन्दर देना है।
चलो, बात दे आओ।"69

पुलिस तन्त्र आम जनता के हितों की रक्षा के लिए होता है, लेकिन तत्कालीन पुलिस तन्त्र शासन व्यवस्था से जुड़े लोगों के हितों की रक्षा को अपना धर्म मानने लगा था। यही पुलिस तन्त्र लोंगों में जन-विरोधी कुचक्रों से आतंक उत्पन्न करता था। इसी प्रकार 'छलांग मारता चला गया' नामक कविता में जमीदार के सिपाही गूला जड़ी हुई लाठी लेकर किसान के दरवाजे पर जाकर उनसे रकम वसूलते हैं और ड़रा धमका कर पैसा ऐंठने के लिए किसान के दरवाजे पर लोहा-जड़ी हुई लाठी से गड़्ढ़ा कर जाते हैं। यह दृश्य बड़ा ही आश्चर्यजनक एवं डरावना है। गरीब किसान कोइ उत्तर न देकर मूकदर्शी बना रहता है। यह सब राजनीतिक मिलीभगत का ही परिणाम है, जिससे इस वर्ग पर अत्याचार किए जाते हैं, उनसे अकारण ही रुपये बसूले जाते हैं -

"जमीदार के सिपाही लाठी का गूला,
लोहाबँधा, दरवाजे गढ़ा कर जाता है।
लोगों के सर, जैसे ढ़ाल देखती आँखों के नीचे गड़े हों।
आदमी जैसे कमान बन जाता है किसान।
सामाजिक और राजनीतिक सहारे कुल
घटकर भग जाते हैं।"70

निराला ने देखा कि देश में औद्योगिक उन्नति के वावजुद भी मध्यम वर्ग की स्थिति में कोई सुधार न हुआ, वह अत्यन्त दयनीय थी और दयनीय ही रही। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि उत्पादन के साधनों का समान वितरण नहीं था। अब ध्यान देनेवाली बात यह है कि जब मध्यम वर्ग की स्थिति इतनी दयनीय थी तो निम्न वर्ग की स्थिति क्या होगी वह तो दो जून की रोटी को भी तरस रहा होगा। औद्योगिक विकास का लाभ पूर्ण रुप से धनिक वर्ग को ही मिला। निम्न वर्ग की स्थिति ज्यों की त्यों बनी रही क्योंकि उन्हें उनके काम के अनुसार वेतन नहीं दिया जाता था-

"तुम्हारे काम, तुम्हारे नाम
तुम्हारे लिए सही संग्राम
तुम्हीं जीवन की धाटी पर
विजय की तरणी खेते हो
तुम्हीं जीवन में पूर्ण विराम।"71

निराला के काव्य में जन-सामान्य की राजनीतिक अवस्थाओं के वर्णन का आभाव नहीं है। निराला एक जागरुक कवि है और वे समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी समझते हैं उसे तटस्थ होकर पूरा भी करते हैं। निराला काव्य में राजनीतिक प्रशासनिक व्यवस्था का स्वरुप आज की अपेक्षा कुछ भिन्न है, क्योंकि उस समय की राजनीति अंग्रेजी राज्य के कर्णधारों एवं उनके राजा महाराजाओं द्वारा ही संचालित होती थी। इस स्थिति में लोक-जीवन राजनीति-विरोधी बनकर विपरीत दिशा में प्रवाहित होने लगा था। पूँजीवादी व्यवस्था पर व्यंग करते हुए निराला लिखते हैं -

"इतना भी नहीं लक्ष-पति का कुमार यदि
होता मैं शिक्षा पाता अरब के समुद्र पार
देश की नीति के मेरे पिता पंडित
एकाधिकार रखते भी धन पर अविचलित
होते उग्रसर करते साम्यवादी प्रचार
चुनती जनता उन्हें ही सनिधार।"72

निराला काव्य में राजनीतिक अवस्था एक अनिवार्य समझदारी के रुप में हमारे सामने आयी है। इसकी उपस्थिति कहीं सामाजिक दायित्व के अनुकूल है तो कहीं राजनीति से सम्पृक्त है। इन्होंने तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था के कुचक्रों अभिव्यक्त करके लोक में चेतना लाने का सफल प्रयास किया है। आम जनता के अन्दर छिपी उस शक्ति को जागृत करने का प्रयास किया जिससे वह अपनी अवस्था में परिवर्तन लाने के लिए प्रयत्नशील हो।

(ग) जन का असंतोष

किसी भी काल और परिस्थिति में सामान्य जनता जो शोषित और शापित है उसका शोषण एक सीमा तक ही किया जा सकता है। जन-सामान्य शोषित होते-होते खुद-बखुद इस स्थिति में पहुँच जाती है जहाँ उसका असंतोष स्पष्ट परिलक्षित होने लगता है। विवेच्य काल में सत्ताधारी वर्ग के द्वारा किये जाने वाले शोषण के कारण जनता में असंतोष व्याप्त था। इस असंतोष को निराला ने देखा और अपनी कविता में व्यक्त किया। चूँकि जनता कमजोर और असहाय थी इस कारण उसका असंतोष विद्रोह का रुप लेने में असमर्थ था, लेकिन जन-सामान्य के अन्तस में यह असंतोष बहुत पहले से पल रहा था। आम जनता खुलकर इस असंतोष को व्यक्त नहीं कर पा रही थी। यही कारण है कि जब निराला इस असंतोष को व्यक्त करने के लिए लिखते हैं तो इसका माध्यम कुत्ते को बनाते जो जमींदार के सिपाही को देखकर भौकने लगता है। यहाँ कुत्ते का भौकना असल में किसानों के असंतोष का प्रतीक है। कठिन परिस्थितियों में सकर्मक होने का संदेश है। जमीदार के सिपाही का भय इतना अधिक है कि जनता असंतुष्ट होते हुए भी सिर उठाने की हिम्मत नहीं कर सकती। अपनी ही चीज पर किसान का अधिकार नहीं। किसान अगर अधिकार जताने की चेष्टा करता है तो सिपाही लाठी का गूला टेककर ऐसे डट-डट कर देखता है कि किसानों की घिग्घि बंध जाती है। डर के मारे भले ही किसान चुप रहता है किन्तु उसके अन्दर पल रहे असंतोष को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता और इसी असंतोष को निराला का यह कहना कि- खेतिहर का कुत्ता जमींदार के सिपाही को देखकर भौकने लगा, उसी असंतोष की स्फष्ट अभिव्यक्ति है।

जनता यह भी जानती है कि सामाजिक सहारे जमींदार के विरुद्ध नहीं खड़े हो सकते, और राजनीतिक सहारे तो केवल जमींदार का ही सहारा बन कर रह गये हैं। साधारण जनता इस अत्याचार और शोषण के सामने अकेली है। इसलिए -

"आदमी जैसे कमान
बन जाता है किसान।
सामाजिक और राजनीतिक सहारे कुल
छूट कर भग जाते हैं।"73

इस व्यवस्था के विरुद्ध का असंतोष तो है ही, तभी तो मेंढ़क इस व्यवस्था पर मूत-मूतकर छलाँग मारता हुआ चला जाता है -

"पास का मेंढ़क थाले के पानी सा उठकर
मूत मूतकर छलाँग मारता चला गया।"74

उपरोक्त कविताओं में विरोध का स्वर प्रतीकात्मक है। परंतु निराला ने इस प्रतीकात्मकता का सहारा बहुत दिनों तक नहीं लिया। सीघ्र ही उनकी कविताओं में विरोध का स्वर प्रखर होने लगा, और झींगुर डटकर बोलने लगा। किसानों की सभा थी नेता जी भाषण दे रहे थे। किसानों को देशभक्ति का पाठ पढ़ा रहे थे। स्वरंत्रता कैसे प्राप्त की जा सकती है, अंग्रेजों को कैसे देश से निकाला जा सकता है। साथ ही यह भी कि अंग्रेजों को देश से निकालना क्यों जरुरी है इसकी राजनीति समझा रहे थे कि इतने में जमीदार का गोड़इत एक खेत के फासले से भीड़ पर गोली चलाने लगा। भीड़ भागने लगी और कांस्टेबल खड़ा ललकारता रहा। इन सबमें एक पेंच और गहरी चाल है झींगुर इस पेंच को भली भाँति समझता है -

"चूँकि हम किसान-सभा के,
भाईजी के णददगार
जमींदार ने गोली चलवायी
पुलिस के हुक्म की तामील की
ऐसा यह पेंच।"75

आखिर यह पेंच है क्या इस बात को निराला द्वारा पढ़ाया हुआ झींगुर ही समझ सकता है। किसान सभा कांग्रेश की मददगार थी। इस सभा का गठन कांग्रेस ने किया था। शांतिपूर्ण सभा के लिए मजबूरन सरकार को अनुमति देनी पड़ी होगी। लोकिन सरकार यह हरगिज न चाहती होगी कि यह सभा सफल होने पाए। दूसरी ओर किसान सभा का बनना, किसानों का जाग्रत होना जमींदार और जमीदारी दोनों के लिए खतरनाक साबित हो सकता था। यह तो स्पष्ट है कि सरकार उस सभा को भंग नहीं कर सकती थी। इसलिए यह काम जमींदार के हवाले किया जाता है। जमींदार के लिए यह एक पंथ और दो काज वाली बात थी। एक तरफ तो यह कि सरकार प्रसन्न रहेगी दूसरी तरफ जमींदारी सुरक्षित रहेगी। कांस्टेबल जो कि सुरक्षा की दृष्टि से तैनात रहता है बह गोड़इत को पकड़ने के स्थान पर ललकारता रहता है। झींगुर इस गठबंधन को समझ जाता है और ड़टकर बोलते हुए सरकार और जमींदार के इस मिलीभगत की पोल खोल देता है।

निराला की यह सोच उनकी सभी कविताओं में देखने को नही मिलती। उपर्युक्त कविताओं में राजनीतिज्ञ जनता के पक्षधर लगते हैं, लेकिन जब उन्हें लगा कि सरकार और पूजींपतियों का गठजोड़ हो रहा है, नेता झूठी भाषणबाजी करके लोगों से बाहबाही लुट रहे हैं तो यह स्थिति बदल जाती है। उन्होंने ऐसे नेताओं को वास्तविकता को तुरंत उजागर किया। महँगू के महँगा होने का कारण यही है कि वह राजनेताओं की चालों को समझ गया है। अब उनके जाल में नहीं फँसता बल्कि अपने भाई-भंधुओं को भी सजग करता है। निराला जवाहरलाल नेहरु के व्यक्तित्व का विश्लेषण करते हुए भारतीय राजनीतिज्ञों की वास्तविकता का उद्घाटन करते हैं। उनकी समझ में यह नहीं आता कि एक ही व्यक्ति एक साथ ही जमींदार, पूँजींपति और किसान-मजदूरों का मित्र कैसे हो सकता है-

"लेंड़ी जमींदारों को आँखों तले रक्खे हुए,
मिलों के मुनाफे खाने वालों के अभिन्न मित्र
देश के किसानों, मजदुरों के भी अपने सगे।"76

तत्कालीन समय की कांग्रेस के चरित्र पर निराला तीखा व्यंग करते हैं। जनता को यह समझाने का प्रयत्न करते हैं कि यह पार्टी किसी की सहायक नही है। इनका लक्ष्य अपना स्वार्थ सिद्ध करना है। देशभक्ति तो महज फैशन के तौर पर राजनेता अपनाए रहते हैं। हालाँकि अपनी कविताओं में इन्होंने नेहरु जी के पक्ष में भी लिखा है। अपने कइ निबंधों में नेहरु की तारीफ की है। यहाँ नेहरु की यह स्थिति है कि लाख चाहने पर भी वह अपने गले से बोर्जुआजी चढ़ाव उतार नहीं पाते। जनता भी अब इनके स्वभाव को समझने लगी है। वह किसी से कम नहीं। जिस गाँव में नेहरु भाषण देने आये है वहाँ के लोग भी जागृत हो चुके हैं। उस गाँव में अधिकतर किसान हैं। कुछ कुराने परजे हैं। कुछ लोग शहरों में छोटी-छोटी नौकरियाँ करते हैं। निराला ने इनके लिए लिखा है -

"गाँव के अधिकतर जन कुली या किसान हैं,
कुछ पुराने परजे जैसे धोबी, तेली, बढ़ई
जमींदार के वाहन।
बाकी परदेश में कौड़ियों के नौकर हैं
महाजनों के दबैल।"78

गाँव में रहने वाले लोग जमींदार के वाहन हैं और शहरों में रहने वाले लोग महाजनों के दबैल बनकर रहने पर विवश हैं। अर्थात इन निम्न-जनों को कहीं भी मुक्ति नहीं है। लेकिन अब ये लोग चतुर होते जा रहे हैं। इन्हें भी अपना काम सिद्ध करना आ गया है। राजनीतिक सभाओं में भी अब ये लोग अपने स्वार्थ से ही आते हैं -

"विपत्तियाँ कई हैं घूस और डण्डे की
उनसे बचने के लिए
रास्ता निकाला है, सभाओं में आते हैं
गाँव के लोग कुल।"79

उपरोक्त कविता आजादी मिलने के एक वर्ष पूर्व की है। अंग्रेजी शासन का शिकंजा ढ़ीला पड़ने लगा था। जमींदार राजनीति में शामिल होने लगे थे। उन्हें लगने लगा था का कांग्रेस का साथ देने से स्वतंत्र भारत में अनेक प्रकार के लाभ हो सकता है। गाँव के लोग भी घूस और डण्डे के भय से बचने के लिए सभाओं में जाने लगे थे। नेहरु जनता को आजादी का स्वप्न दिखाते हैं। जनता मंत्र-मुग्ध हो जाती है। जेल काटकर लौटे कांग्रेसी उम्मीदवार भाषण देते हैं। किसान सभा पर गोली चलाने वाले जमीदार अब पासा पलट रहे हैं।   जमींदारी की रक्षा पहले अंग्रेजों के हाथ में में थी तो वे अंग्रेजों का साथ दे रहे थे। अब स्थिति बदल रही है, और यह रक्षा कांग्रेस के हाथ में जाने लगी है तो जमींदार कांग्रेस के साथ हो चले हैं। यह सब देखकर जनता के मन में संशय होने लगा। सीधे-सादे लकुआ को लगता है कि अब नेहरु भी(अपने) आम जनता के नहीं रहे। महगू से लकुआ पुछता है इन सब बाँतों का क्या मतलब है आखिर यह बदलाव क्यों और कैसे? क्या नेहरु भी अब अपने नहीं? तो महगू अत्यंत गंभीरता से बताता है -

"महगू ने कहा, हाँ, कम्पू में किरिया के
गोली जो लगी थी
उसका कारण पंडितजी का शागिर्द है,
रामदास को कांग्रेसमैन बनाने वाला
जो मिल का मालिक है
यहाँ भी वह जमींदार, बाजू से लगा ही है।
कहते है, इनके रुपये से ये चलते हैं,
कभी-कभी लाखों पर हाथ साफ करते हैं।
लुकुआ घबरा गया। भला फिर हम कहाँ जाएँ ?"80

लुकुआ का घबराना स्वाभाविक ही है। पहले किसानों पर जमींदार गोली चलवाता था। अब मजदूरों पर पंडितजी के शागिर्द गोली चलवाते हैं। गाँव में जमींदार इनके सहायक हैं जनता पर मनमानी करने के लिए पुँजीपति और जमींदारों ने षड़यन्त्र करने प्रारम्भ कर

दिए हैं। एक शोषक के जाने से पहले ही दूसरे शोषक तैयार हो गये, एसे में आम जनता का क्या होगा। महगू लुकुआ को आश्वस्त करता है कि एक उड़ती हुई खबर उसने सुनी है। हमारे बहुत से आदमी अभी छिपे हुए हैं। यहाँ अपने लोगों से तात्पर्य है आम जनता के हितक्षक। यह आम जनता एक विशेष दल है जो शासन के खिलाफ जनता के असंतोष की अभिव्यक्ति करता है। महगू बताता है कि चूकिं अभी परिस्थितियाँ अनुकूल नहीं है इसलिए ये लोग छिपे हुए हैं। इस समय किसी पर भरोसा नहीं किया जा सकता। राजनीति में षडयंत्रों की भरमार है। अखबार भी व्यापारियों के इशारे पर चलते हैं। जब कांग्रेसी बड़े त्याग के लिए कमर कसेगें तब वह बाहर निकलेंगे। इसका सीधा अर्थ यह हुआ कि ये लोग कांग्रेसी नहीं है। छिपे हुए इसलिए कि वे शिर्फ सरकार के लिए खतरा नहीं बल्कि कांग्रेस को भी ग्राह्य नहीं है। अभी उनपर ऐसा अंकुश है कि उनके नाम तक अखबार में नहीं छप सकते। लुकुआ को फिर संशय होता है कि फिर देश की मुक्ति कैसे होगी ? महगू उत्तर देता है -

"जैसा तु लुकुआ है,
वैसा ही होना है,
बड़े-बड़े आदमी
धन मान छोड़ेंगे।
तभी देश मुक्त है।"81

निराला के काव्य में वर्णित महगू, झींगुर जैसे पात्रों को देखकर लगता है कि निराला शोषण के विरोध का जो महत्त उद्देश्य लेकर चले थे, वह लगभग अपनी पूर्णता प्राप्त करने ही वाला था। जमींदार के वाहन अब मानसिक गुलामी का जुआ अपने कंधे से झटक चुके थे। अब वे बुद्धि विवेक का सहारा लेकर अपने उन लोंगों की तलाश कर रहे थे जो उनकी मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करने के लिए अनुकूल समय का इन्तजार कर रहे थे। महगू को तो उसके अपने लोगों की खबर भी मिल चुकी थी। अपने परिवेश को समझ कर

समयानुकूल आचरण करना यथार्थ-बोध की निशानी है। निराला ने जातीय जनता को ऐसे यथार्थ बोध से भर दिया था, कम से कम उपरोक्त कविताओं से तो ऐसा लगता ही है।

ऐसा नहीं है कि निराला का काव्य उनकी कल्पना शक्ति का परिणाम है। वास्तविक जीवन में उनका सबंध इन लोगों से था। किसान सभा के संगठन में वे सहायता करते थे। इन्हीं लोगों की गतिविधियाँ उनके काव्य का आधार बनती है। बदलू अहीर का क्रोध में जमींदार के गोड़इत को पीटना सहज और व्यवहारिक लगता है।

गाँव में डिप्टी साहब आये हैं। उनके साथ दूसरे बड़े अफसर भी आये हैं। दारोगा जी इसलिए आये हैं कि गाँव में एक बाग है। सारा गाँव यह जानता है कि वह बाग लछमिन का है, परंतु जमींदार की आँख उस बाग पर लगी है। जमींदार बाग को बंजर सावित करना चाहता है और लछमिन को झूठा दावेदार। डिप्टी वही करेगा जो जमींदार के हक में है। जमींदार का गोड़इत बदलू अहीर के पास पहुँचता है और उसे बीस सेर दूध डेरे पर भेजने के लिए कहता है। बदलू दूध देने से इनकार तो नहीं करता परंतु उससे पूछ लेता है कि लछमिन का बाग हड़पा जा रहा है तुम भी कुछ कहोगे या नहीं यानी गवाही दोगे या नहीं। जानता तो सारा गाँव है कि बाग लछमिन का है पर जमींदार के भय से कोई गवाही नही देगा। शायद बदलू गवाही देने का मन बना चुका था। चूकिं गोड़इत भी आम आदमी ही था इसलिए बदलू उससे भी आशा करता है कि वह लछमिन के हक में गवाही दे। बदले में गोड़इत उसे डाँटते हुए कहता है - जहाँ मालिक का भला वहाँ हमारा भला। अपना वर्ग को छोड़कर शत्रु वर्ग की सहायता करने वाले गोड़इत पर बदलु आग बबुला हो उठता है -

> "जमकर बदलू ने बदमाश को देखा, फिर
> उठा क्रोध से भरकर
> और एक घूसा तानकर नाक पर दिया।"82

संगठन में शक्ति होती है। लोग जातीय वेश में ढ़लने के बाद व्यक्तिगत आपत्ति को

देश और समाज की आपत्ति बना रहे थे। आम जनता काँटे को काँटे से निकालने की शक्ति प्राप्त कर चुकी थी। पल भर में सारे गाँव का रंग बदल जाता है। जमींदार और थानेदार ने जब यह खबर सुनी तो उनके होश फाख्ता हो गये। डिप्टी को क्या मुँह दिखायेंगें डिप्टी की निगाह में तो यह बगावत कही जायेगी। थानेदार चुपचाप अपने सिपाहियों को पैसे देकर रसद खरीदने भेज देता है। गाँव वालों मे भी आत्मविश्वास जागृत होता है, और जो लोग जमींदार के भय से चुप्पी साधे बैठे थे वे भी लछमिन के बाग के लिए सच्ची गवाही देने के लिए तैयार हो गये। इस प्रकार हम देखते हैं कि जनता का असंतोष उनके शोषण के विरुद्ध बगावत का रुप ले लेती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ -

1) निराला के काव्य का समीक्षात्मक अध्ययन (मेजर डा0 नारायण राऊत) विद्या प्रकाशन, सं. 2007 पृ0 241

2) वही, पृ. 241

3) हिन्दी साहित्य का वृहत्त इतिहास, चतुर्दश भाग, ना. प्र. सभा काशी, पृ. 40

4) सं. नन्दकिशोर नवल - निराला रचनावली, भाग - 1, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, सं. 2006, पृ. 76

5) वही, भाग - 1, पृ. 77

6) निराला के काव्य का समीक्षात्मक अध्ययन (मेजर डा0 नारायण राऊत) विद्या प्रकाशन, 2007 पृ. 244

7) वही. पृ. 244

8) वही, पृ. 72

9) वही. पृ. 73

10) वही, पृ. 83

11) निराला, नये पत्ते(स्फचिक शिला) लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997 1997, पृ. 55

12) सं. नन्दकिशोर नवल, निराला रचनावली, भाग - 1, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, पृ. 339)

13) निराला, नये पत्ते(स्फचिक शिला) लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997 1997, पृ. 56

14) सं. नन्दकिशोर नवल, निराला रचनावली, भाग - 2, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, पृ. 188

15) वही, पृ. 188

16) वही, पृ. 2000

17) वही, पृ. 187

18) वही, भाग - 2, पृ. 137

19) वही, भाग - 1, पृ. 76

20) निराला - बेला(केश रुखे, अधर सुखे) लोकभारती प्रकाशन, 1998, पृ. 62

21) सं. नन्दकिशोर नवल, निराला रचनावली, भाग -1, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, पृ. 72

22) वही, पृ. 47, 48

23) वही, भाग - 2, पृ. 39

24) संपादक ओंकार शरद, निराला, प्र. सं. पृ. 182

25) सं. नन्दकिशोर नवल, निराला रचनावली, भाग - 1, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, पृ. 137

26) वही, पृ. 309

27) वही, भाग - 2, पृ. 50

28) वही, भाग - 1, पृ. 136

29) वही, पृ. 166

30) वही, भाग -2, पृ. 202

31) वही, भाग - 1, पृ. 317

32) निराला, परिमल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998, पृ. 143, 144

33) सं. नन्दकिशोर नवल, निराला रचनावली, भाग - 1, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, पृ. 309

34) निराला, सांध्य काकली(ये बालों के बादल छाये) राजकमल प्रकशन ,नई दिल्ली 2000, पृ. 91

35) निराला, अनामिका(सरोज स्मृति) राजकमल प्रकशन ,नई दिल्ली 1998, पृ. 92

36) वही, पृ. 92

37) वही, पृ. 93

38) वही, पृ. 93

39) वही, पृ. 93

40) निराला, गीतगूँज(वरद हुई सारदा जी हमारी) राजकमल प्रकशन ,नई दिल्ली 1981, पृ, 45

41) वही, अर्चना(फूटे हैं आमों में बौर) लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1995) पृ. 49

42) वही, (खेलुँगी कभी न होली) लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 49

43) वही, परिमल(पंचवटी प्रसंग) 1998, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 226

44) निराला, अर्चना (हरि का मन से गुनगान करो) लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1995, पृ. 60

45) निराला, अपरा(सहस्राब्दि) राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000, पृ. 175

46) सं. नन्दकिशोर नवल, निराला रचनावली, भाग - 2, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, पृ. 254

47) निराला, नये पत्ते (मास्को डायेलाग्स) लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997 1997, पृ. 25, 26

48) सं. नन्दकिशोर नवल, निराला रचनावली, भाग - 2, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, पृ. 166

49) डॉ. शिवकुमार शर्मा, हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ, अशोक प्रकाशन, दिल्ली - 1994, पृ. 517

50) निराला, अनामिका(सरोज स्मृति) राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2000, पृ. 146

51) निराला, गीतिका(छोड़ दो जीवन यों न मलो) राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली -1996, पृ. 42

52) सं. नन्दकिशोर नवल, निराला रचनावली, भाग - 2, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, पृ. 113, 114

53) सं. नन्दकिशोर नवल, निराला रचनावली, भाग - 2, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, पृ. 37

54) निराला, परिमल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998, पृ. 42

55) सं. नन्दकिशोर नवल, निराला रचनावली, भाग - 2, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, पृ. 82, 83

56) निराला, नये पत्ते (महँगु महँगा रहा) लोक भारती प्रकाशन, 1997, पृ. 106, 107
57) डॉ0 रामविलास शर्मा, निराला की साहित्य साधना-2, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 1969, पृ0 67
58) निराला, बेला (जल्द-जल्द पैर बढ़ाओ) लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1998 पृ. 78
59) डॉ0 मंजुला जैन, पंत एंव निराला के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन, चिंतन प्रकाशन-कानपुर 1996, पृ0 284
60) निराला, अपरा (आवाहन) 2000, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 117
61) डॉ0 सरोज मार्कण्डेय, निराला साहित्य में युगीन समस्याएँ, 1972 पृ0 81
62) डॉ. पूर्णचन्द शर्मा, हरियाणवी साहित्य और संस्कृति, हरियाणा साहित्य अकादमी, चंड़ीगढ़, 1990, पृ. 94
63) निराला, परिमल, (गये रुप पहचान) राजकमल प्रकाशन, 1998, पृ. 122
64) निराला, कुकुरमुत्ता, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1998, पृ. 39
65) निराला, अपरा (जागो फिर एक बार) राजकमल प्रकाशन- नई दिल्ली, 2000, पृ. 16
66) निराला, अपरा (धारा) राजकमल प्रकाशन- नई दिल्ली, 2000, पृ. 116
67) निराला, अपरा (छत्रपति शिवाजी का पत्र) राजकमल प्रकाशन- नई दिल्ली, 2000, पृ. 75
68) निराला, नये पत्ते (राजे ने अपनी रखवाली की) 1997, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, 1997, पृ. 31
69) निराला, नये पत्ते (झीगुंर ड़टकर बोला) लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997, पृ. 64
70) निराला, नये पत्ते (कुत्ता भौकनें लगा) लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997, पृ. 62
71) निराला, नये पत्ते (छलांग मारता चला गया) लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997, पृ. 92
72) डॉ0 मंजुला जैन, पंत एंव निराला के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन, चिंतन प्रकाशन-कानपुर 1996, पृ. 291

73) निराला, अपरा (बनबेला) राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000, पृ. 61

74) निराला, नये पत्ते (छलांग मारता चला गया) लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997, पृ. 92, 93

75) निराला, नये पत्ते (छलांग मारता चला गया) लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997, पृ. 93

76) निराला, नये पत्ते (झींगुर ड़टकर बोला) लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997, पृ. 64

77) निराला, नये पत्ते (महँगु महँगा रहा) लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997, पृ. 107

78) सं. नन्दकिशोर नवल, निराला रचनावली - भाग - 2, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, पृ. 204

79) सं. नन्दकिशोर नवल, निराला रचनावली - भाग - 2, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, पृ. 205

80) सं. नन्दकिशोर नवल, निराला रचनावली - भाग - 2, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, पृ. 200

81) सं. नन्दकिशोर नवल, निराला रचनावली - भाग - 2, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, पृ. 50

82) सं. नन्दकिशोर नवल, निराला रचनावली - भाग - 2, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली - 2006, पृ. 202